व्यवस्था परिवर्तन क्यों ?

सृष्टि के प्रारंभ से ही दो प्रकार की प्रवृतियॉ अस्तित्व में है 1. दैवी प्रवृति 2. आसुरी प्रवृति। इन दोनों के बीच निरंतर संघर्ष चलता रहता है। दैवी प्रवृति के लोगों की संख्या बहुत अधिक होती है तथा आसुरी लोगों की बहुत कम। किन्तु आसुरी प्रवृति के लोग दैवी प्रवृति वालों की अपेक्षा बहुत शक्तिशाली होते है। दैवी प्रवृति के व्यक्तियों के समूह को समाज कहते है तथा आसुरी प्रवृति वालो को समाज विरोधी। समाज और समाज विरोधी तत्वों के बीच निरंतर संघर्ष होता रहा है। समाज विरोधी तत्वों पर समाज के नियंत्रण को व्यवस्था के नाम से पुकारा जाता है। व्यवस्था उस प्रक्रिया को कहते है जो समाज द्वारा समाज विरोधी तत्वों पर नियंत्रण तथा समाज के सुचारू रूप से संचालन के लिए बनाई जाती है।

व्यवस्था सम्पूर्ण इकाई द्वारा सम्पूर्ण इकाई के बीच से सम्पूर्ण इकाई की सुरक्षा और सुचारू संचालन के लिये होती है। किन्तु किसी भी व्यवस्था का क्रियान्वयन सम्पूर्ण इकाई नहीं करती बल्कि सम्पूर्ण इकाई द्वारा नियुक्त एक छोटा सा समूह करता है। समाज की व्यवस्था करने वाले वर्ग को सरकार कहते है। समाज शब्द पूरे विश्व का प्रतिनिधित्व करता है। अतः सरकार भी पूरे विश्व की एक ही होनी चाहिये। किन्तु अब तक विश्व राष्ट्रों से ऊपर नहीं उठ सका है अतः व्यवस्था भी राष्ट्रों की ही है और सरकार भी। भारत भी ऐसा ही एक राष्ट्र है जिसकी एक अपनी स्वतंत्र व्यवस्था भी है और सरकार भी।

सन् सैंतालीस से भारत की अपनी व्यवस्था है। स्वतंत्रता के समय सोचा भी गया था तथा घोषणा भी हुई थी कि भारत में सुराज्य होगा। अपराध नियंत्रण होगा। भ्रष्टाचार तथा आर्थिक असमानता नहीं होगी। श्रम का सम्मान होगा तथा उसका उचित मूल्य मिलेगा। कानून का पालन करने वाले निर्भय होगे। बेरोजगारी नहीं होगी तथा भारत इतना आत्म निर्भर होगा कि विदेशी कर्ज का कोई प्रश्न ही नहीं रहेगा। जाति और धर्म का भेदभाव नहीं किया जायेगा। ऐसी ही अनेक घोषणाएं की गई थी। किन्तु हम सत्तर वर्षो के बाद समीक्षा करते है तो पाते है कि हम हर मामले में पिछड़ते चले गये। उत्पादन तीव्र गति से बढ़ा किन्तु सुरक्षा, भ्रष्टाचार, आर्थिक असमानता, बेरोजगारी, विदेशी कर्ज, धार्मिक, जातीय टकराव आदि पर कोई रोक नहीं लगी बल्कि सच्चाई यह है कि प्रत्येक मामले में हम लगातार पिछड़ते गये। गांधी जी ने हमें स्वराज्य का नारा दिया था जिसका अर्थ होता है ''प्रत्येक इकाई को अपने इकाईगत निर्णय की स्वतंत्रता।'' गांधी जी तथा उनके आश्रम के लोग निरंतर इसी विचार के पोषक रहे। किन्तु गांधी हत्या के बाद कांग्रेस तथा आश्रम की सोच भिन्न–भिन्न हो गई। आश्रम की शक्ति कमजोर हुई तथा नेहरू पटेल के नेतृत्व में कांग्रेस ने स्वराज्य के स्थान पर सुराज्य को अपना लक्ष्य घोषित कर दिया। कांग्रेस के लोगो की नीयत विश्वास योग्य थी। अतः आम नागरिकों ने सुराज्य की प्रतीक्षा में स्वराज्य की नीति को छोड़ना स्वीकार कर लिया। सुराज्य व्यवस्था के दोष निश्चित थे जो धीरे–धीरे व्यवस्था के अंग बनते चले गये और धीरे–धीरे हम व्यवस्था से अव्यवस्था की ओर तथा अब अव्यवस्था से कुव्यवस्था की ओर बढ़ते जा रहे है। बिल्कुल स्पष्ट हो चुका है कि व्यवस्था पूरी तरह समाप्त हो चुकी है और यदि व्यवस्था नाम की कोई चीज है भी तो वह समाज विरोधियों की व्यवस्था समाज के लिये चल रही है। निश्चित रूप से यह एक चिन्तनीय समय है। भारत के अनेक साधु पुरूष इस व्यवस्था की बीमारियों को ठीक करने में दिन रात लगे हुए है किन्तु व्यवस्था लगातार विपरीत दिशा में दौड़ रही है। अनेक विद्वान निराश होकर भगवत भजन में लग गये है अथवा अनेक अब भी व्यवस्था में सुधार का प्रयास कर रहे है, किन्तु न तो वे सफल है नहीं सफलता की कोई उम्मीद शेष है

मेरे विचार में व्यवस्था के प्रत्येक अंग एक–दूसरे से इस तरह जुड़े है कि किसी एक के सुधार से कोई परिणाम दिखने वाला नही। अतः व्यवस्था मे आमूल चूल परिवर्तन करना होगा। वर्तमान व्यवस्था के स्थान पर नई व्यवस्था का एक प्रारूप बनाकर तदनुसार व्यवस्था परिवर्तन ही हमारा उद्देश्य है और मेरी यह इच्छा है कि नई व्यवस्था का प्रारूप बनाने तथा व्यवस्था परिवर्तन में समाज के जागरूक साधु पुरूषों की पूरी सहभागिता हो।

नई व्यवस्था का प्रस्तावित प्रारूप

विश्व की, और विशेषकर भारत की राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक सहित सभी क्षेत्रों में अनेक विकृतियां आई हैं। विकृतियां इतनी गंभीर है कि इनमे किसी सुधार से कोई लाभ होता नहीं दिखता। इसलिये सम्पूर्ण व्यवस्था परिवर्तन की योजना बनी है। वैसे तो सम्पूर्ण व्यवस्था मे अनेक विकृतियां प्रवेश कर गई है किन्तु हम उनमे से इक्कीस प्रमुख विकृतियों की चर्चा कर रहे है।

1. जब व्यवस्था से जुड़े लोगो की नीयत खराब हो जावे–

2. जब नियुक्त व्यवस्था अपनी निर्वाचन प्रक्रिया, अधिकार, वेतन, कार्य प्रणाली, दायित्व, स्वयं ही तय करने लगे तथा निर्वाचक उक्त निर्णय को मानने के लिये बाध्य हो। प्रतिनिधि स्वयं को शासक तथा नियोक्ता को शासित समझना तथा कहना शुरू कर दे।

3. जब समाज का न्याय और सुरक्षा के लिये कानून पर से विश्वास हट जाये तथा वह न्याय के लिये भीड़ तंत्र का सहारा लेने लगे।

4. जब समाज में कर्तव्यों की जगह अधिकारों की मांग और प्रतिस्पर्धा बढ़ने लगे।

5. जब सफलता के लिये शराफत की जगह चालाकी या धूर्तता अधिक प्रभावी मानी जाने लगे।

6. जब संस्थाओं की तुलना में संगठन अधिक बनने लगे।

7. जब राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक संगठन तथा संस्थाएं व्यावसायिक आचरण करने लगें। दूसरी ओर व्यावसायिक गतिविधियों में राज्य का हस्तक्षेप बढ़ने लगे ।

8. जब संचालक और संचालित के बीच दूरी बढ़ती जावे।

9. जब मानव स्वभाव में निरंतर ताप वृद्धि होती रहे।

10. जब मानव स्वभाव में निरंतर स्वार्थ वृद्धि होती रहे।

11. जब समाज में वर्ग समन्वय की जगह वर्ग विद्वेष, वर्ग संघर्ष को जान बूझकर प्रोत्साहित किया जाये।

12. जब निष्कर्ष निकालने में विचार मंथन की अपेक्षा विचार प्रसार अधिक प्रभावकारी हो।

13. जब विचार मंथन में भी वैचारिक वातावरण को पीछे करके भावनात्मक विषय, भावनात्मक वातावरण बनाने का अधिक प्रयास हो।

14. जब ज्ञान की जगह शिक्षा को अधिक महत्व दिया जाने लगे।

15. जब धर्म की मान्यता में गुणों के स्थान पर संख्यात्मक विस्तार की छीना–झपटी शुरू हो जावे।

16. जब राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक व्यवस्था से जुड़े संगठनो का अपराधियों तथा धूर्तो के साथ कुछ आंतरिक समझौता दिखता हो।

17. जब धर्म और विज्ञान के बीच दूरी बढ़ने लगे।

18. जब नैतिक पतन की कीमत पर भौतिक उन्नति की भूख पैदा की जा रही हो।

19 जब व्यक्ति के प्रकृति प्रदत अधिकारों को भी संविधान प्रदत्त माना और कहा जाने लगे। संविधान ऐसे अधिकारो में भी हस्तक्षेप करने लगे।

20 जब समाज व्यक्तियों, परिवारों, गॉवो का संघ न होकर धर्म, जाति, लिंग, उम्र आधारित वर्गो का संघ बनने लगे।

21 जब धर्म या राष्ट्र स्वयं को समाज से भी ऊपर कहने या मानने लगे।

यद्यपि उपरोक्त अधिकांश विकृतियां, विश्वव्यापी हैं किन्तु इन सबका भारत में भी बहुत व्यापक दुष्प्रभाव है तथा अधिकांश विकृतियां व्यवस्था से जुड़े व्यक्तियों द्वारा स्वार्थ वश बुरी नीयत से जानबूझकर पैदा की गई हैं, या बढ़ाई जा रही हैं। इसलिये हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे है कि अब व्यवस्था में सुधार की अपेक्षा व्यवस्था परिवर्तन ही उचित मार्ग हैं।

ऊपर लिखी इक्कीस परिस्थितियां बहुत गंभीर हैं इक्कीस में से यदि कोई एक भी स्थिति का वातावरण बनकर वह वायरल हो जावे तो हमारी सम्पूर्ण व्यवस्था को गंभीर क्षति पहुंचा सकती है। किन्तु यदि सभी इक्कीस खतरे एक साथ सक्रिय हो जावे तथा जिनके नियंत्रण की कोई संभावना दूर–दूर तक न दिख रही हो तो आप खतरे की गंभीरता का अनुमान स्वंय लगा सकते है। इसी गंभीरता के ऑकलन का परिणाम है कि भारत में कोई भी व्यक्ति व्यवस्था में सुधार के आगे कोई चर्चा प्रारंभ करने की टिप्पणी नहीं कर पाता।

व्यवस्था परिवर्तन के लिये हम दो दिशाओं में अलग–अलग सक्रिय हैं– 1. व्यवस्था परिवर्तन अभियान कमेटी 2. नई व्यवस्था के प्रारूप पर विचार मंथन

व्यवस्था परिवर्तन अभियान कमेटी के लिये व्यवस्थापक नाम से एक संगठन सक्रिय हैं। इसका प्रारंभ दो अक्टूबर दो हजार पंद्रह को नोएडा में हुआ। चार मुददों पर जनमत जागरण की योजना बनी। 1. परिवार, गांव, जिले को संवैधानिक अधिकार 2. लोक संसद 3. राइट टू रिकॉल 4. जीवन भत्ता। जनमत जागरण के लिये जनवरी सोलह से संगठन बनना शुरू हुआ। पांच माह में अब तक देश भर के दो सौ जिलों में जिला समितियॉ बनना शुरू हो चुकी हैं। शेष जिलों में भी अच्छी प्रगति हो रही है। 2024 के पूर्व सफलता का ऑकलन करके योजना बन रही है। भारत में राजनीतिक व्यवस्था ने सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक या अन्य सभी प्रकार की व्यवस्थाओं पर अपना शिकंजा कस दिया है तथा यह कसावट लगातार बढ़ती ही जा रही है। किसी भी प्रकार की व्यवस्था में किसी भी तरह के बदलाव के पूर्व इस बाधा को दूर करना आवश्यक है। अभियान इस जनमत जागरण द्वारा इस बाधा को दूर करेगा। यदि आवश्यक हुआ तो इसके लिये आंदोलन भी करना पड़ सकता है, किन्तु स्पष्ट है कि किसी भी परिस्थिति में, चाहे वह जनमत जागरण तक सीमित हो या आंदोलन तक, किसी भी कानून का कभी उल्लंघन नहीं किया जायेगा, क्योंकि यह जनमत जागरण या आंदोलन न किसी सरकार के विरूद्ध हैं न ही संसद के और न ही राजनैतिक व्यवस्था के। यह जनमत जागरण तो संवैधानिक तरीके से भारतीय संविधान में तीन चार संशोधनों के लिये निवेदन तक सीमित हैं। हमें पूरा विश्वास है कि अक्टूकर सत्रह तक व्यवस्थापक की राष्ट्रीय स्तर तक सक्रियता दिखने लग जायेगी। व्यवस्थापक एक स्वतंत्र संगठन के रूप मे निरंतर सक्रिय हैं।

व्यवस्थापक तो व्यवस्था में आने वाली मुख्य बाधा को दूर करने तक सीमित है। किन्तु इसके साथ–साथ हमें यह भी विचार मंथन जारी रखना होगा कि विश्व की और मुख्य रूप से भारत की नई व्यवस्था का स्वरूप कैसा होना चाहिये। यदि ऐसे किसी पूर्व प्रारूप पर समाज में कोई स्पष्ट सोच नहीं बनी तो हमारे व्यवस्था परिवर्तन के सारे प्रयत्न उसी तरह हाई जैक हो जायेंगे, जैसे स्वतंत्रता के बाद या जे.पी. आंदोलन के बाद हुए। इसी सतर्कता के अंतर्गत ज्ञान यज्ञ परिवार एक संगठन के रूप में नई व्यवस्था के प्रारूप पर निरंतर विचार मंथन जारी रखे हुए है। इस संगठन का मुख्य दायित्व मैं संभाल रहा हूॅ तथा ज्ञान तत्व पाक्षिक इस कार्य में सहायक है। सम्पूर्ण व्यवस्था परिवर्तन के परिणाम स्वरूप नई व्यवस्था का संभावित ढांचा कैसा होगा इस विषय पर अब तक जो धुंधली तस्वीर बनी है वह आपको प्रस्तुत है।

व्यवस्थाएॅ तीन प्रकार की होती हैं– 1. प्राकृतिक 2. संवैधानिक 3. सामाजिक। इस तरह व्यक्ति के अधिकार भी प्राकृतिक, संवैधानिक, सामाजिक के रूप में विभाजित होते हैं। व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकार उसे जन्म से ही स्वतः प्राप्त होते हैं, तथा इन प्राकृतिक अधिकारों में कोई भी अन्य किसी भी परिस्थिति में उसकी

सहमति के बिना कभी कोई कटौती या संशोधन नहीं कर सकता। चूंकि अब तक दुनियां की व्यवस्थाएँ इन्हें प्राकृतिक अधिकार नहीं मानती थीं इसलिये कुछ भ्रम बना रहा। वैसे अनेक राजनैतिक व्यवस्थाएँ जिन्हे मूल अधिकार मानती और कहती है, वह आंशिक रूप से प्राकृतिक अधिकारों का ही आंशिक स्वरूप है। अब तक मूल अधिकारों की दुनियां में कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं बनी, जिसके कारण भारतीय संविधान निर्माता भी इसमें अपना दिमाग नहीं लगा सके। और यही कारण है कि भारतीय संविधान ने कुछ पश्चिम के संविधानों की नकल करते हुए बिना सोचे समझे संविधान में मौलिक अधिकार लिख दिये। वास्तविकता यह है कि संविधान न मूल अधिकार देता है न वापस ले सकता है। संविधान तो प्रत्येक व्यक्ति को उसके मूल अधिकारों की सुरक्षा की गारंटी मात्र देता हैं।

मूल अधिकार चार ही होते हैं– 1. जीने का अधिकार 2. अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार 3. स्व निर्णय का अधिकार 4. सम्पत्ति का अधिकार। इसके अतिरिक्त सारे अधिकार या तो सामाजिक होते है या संवैधानिक, किन्तु मौलिक या प्राकृतिक नहीं। मौलिक अधिकारों की कोई सीमा नहीं होती। प्रत्येक व्यक्ति इन अधिकारों के अंतर्गत उस सीमा तक जा सकता है जहां किसी दूसरे की सीमा प्रारंभ न हो जावे। यदि किन्ही दो व्यक्तियों की सीमाएं टकराने लगती है तथा आपस में कोई समाधान नहीं निकलता तब समाज या संविधान इन दोनों के बीच कोई सीमा बनाकर उन्हें अपनी–अपनी सीमा में रहने को बाध्य करता है। मूल अधिकार व्यक्तिगत होते है, सामूहिक नहीं। मूल अधिकार अहस्तांतरणीय होते हैं। ये किसी संवैधानिक प्रक्रिया के अंन्तर्गत ही किसी अन्य को दिये या लिये जा सकते हैं।

वर्तमान समय में शिक्षा, स्वास्थ, धार्मिक, स्वतंत्रता, रोजगार आदि को मूल अधिकार कहने या मानने की जो धारणा हैं, वह गलत परिभाषा के कारण हैं। यदि सही परिभाषा समझ ली जावे तो यह भ्रम अपने आप दूर हो जायेगा।

2 परिवार व्यवस्था

अब तक परिवार को प्राकृतिक इकाई माना जाता रहा है जो मेरे विचार में गलत है। परिवार एक संगठन हैं, प्राकृतिक इकाई नहीं। व्यक्ति से लेकर समाज तक व्यवस्था के दो क्रम प्रचलित रहे हैं। 1. व्यक्ति, परिवार, गांव जिला, प्रदेश, देश, विश्व 2. व्यक्ति, परिवार, कुटुम्ब, जाति, वर्ण धर्म, राष्ट्र, समाज। पहली व्यवस्था मुख्य रूप से संवैधानिक या राजनैतिक है और दूसरी सामाजिक किन्तु भारत के संविधान निर्माताओं ने ना समझी में दूसरी व्यवस्था को संवैधानिक मान लिया तथा पहली को सामाजिक। व्यक्ति के मूल अधिकारों की सुरक्षा राज्य का दायित्व है और राज्य इन इकाइयों के माध्यम से सुरक्षा और न्याय का कार्य करता है जबकि व्यक्ति को ठीक दिशा में चलने की ट्रेनिग देना समाज का काम है तथा समाज दूसरे क्रम के माध्यम से इस काम को करता रहा है। चूंकि सत्तर वर्षो में पूरी व्यवस्था अस्त व्यस्त हो चुकी है तथा अनेक शब्द भी अपना भावार्थ बदल चुके है इसलिये अब दूसरे क्रम को पूरी तरह छोड़ कर पहले क्रम में ही राज्य और समाज को एकाकार हो जाना चाहिये। वैसे भी दोनों ही क्रमों में परिवार व्यवस्था शामिल रही है, किन्तु पता नहीं हमारे संविधान बनाने वालों ने क्या सोचकर परिवार को बाहर किया। संभव है कि पश्चिम की व्यवस्था में परिवार को महत्व न होने से इन्होंने भी आंख बंद करके नकल कर दी।

परिवार की एक परिभाषा होगी ''संयुक्त सम्पत्ति तथा संयुक्त उत्तर दायित्व के आधार पर एक साथ रहने के लिये सहमत व्यक्तियों का पंजीकृत समूह''। किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं होगी। परिवार से पृथक होते समय व्यक्ति परिवार की सदस्य संख्या के आधार पर सम्पत्ति में से हिस्सा लेकर अलग होगा तथा नये परिवार में सम्मिलित करेगा। यदि कोई व्यक्ति किसी परिवार का सदस्य नहीं होगा तो वह ग्राम परिवार में अपनी सम्पत्ति अमानत रखेगा, जिसे वह तब तक खर्च नहीं कर सकता जब तक वह किसी परिवार का सदस्य न हो जावे। यदि किसी परिवार का कोई सदस्य कोई अपराध करता है, तथा यह प्रमाणित हो जाता है कि परिवार ने जानते हुए भी न रोका न उसे अलग किया तो परिवार को भी इसमे दोषी माना जा सकता है। परिवार अपने अधिकार तथा कार्य प्रणाली स्वयं तय करेगा किन्तु यह ध्यान रखेगा कि अपने परिवार के किसी सदस्य की सहमति के बिना उसके मौलिक अधिकारों की सीमा न टूटे तथा किसी अन्य परिवार अथवा तंत्र की सीमाओं का भी अतिक्रमण न हो। परिवार का कोई भी सदस्य कभी भी परिवार छोड़ सकता है या निकाला जा

सकता है। यदि परिवार का कोई सदस्य तंत्र अथवा समाज की किसी इकाई के पास परिवार के विरूद्ध कोई शिकायत करता है तो उसे तत्काल परिवार की सदस्यता छोड़नी होगी किन्तु कोई किसी सामाजिक इकाई से सलाह या निवेदन कर सकता है। परिवार का प्रत्येक सदस्य पंजीकृत होगा। यदि कोई बालक जन्म लेता है तो वह बालक उस परिवार का सदस्य होगा, जिस परिवार की उसकी मां पंजीकृत सदस्य होगी। बारह वर्ष से पूर्व बालक अवयस्क माना जायेगा। यदि बारह वर्ष से कम उम्र का बालक परिवार छोड़ता है या निकाला जाता है तो उसकी सम्पत्ति ग्राम सभा के पास अमानत होगी। उसकी व्यवस्था ग्राम सभा करेगी।

परिवार में किसी भी स्तर पर उम्र या लिंग का भेद नहीं होगा। परिवार का एक प्रमुख होगा जो परिवार में सबसे अधिक उम्र का व्यक्ति होगा। उसकी भूमिका राष्ट्रपति के समान होगी। प्रमुख के प्रस्ताव पर सभी सदस्य गुप्त मतदान द्वारा मुखिया का चुनाव करेंगे। अन्य नियम परिवार बनायेगा। मुखिया प्रमुख के नाम पर परिवार का संचालक होगा। परिवार जिन कार्यो को नहीं कर सकेगा अथवा जो कार्य किन्ही अन्य इकाइयों से संबंध रखेगे वे सब कार्य परिवार ग्राम सभा को दे देगा।

प्रत्येक परिवार पंजीकृत होगा। उसे एक कोड नम्बर दिया जायेगा, जो नौ अंकों का होगा। यह नम्बर परिवार की स्थाई पहचान होगी। इसी नम्बर पर उसके बैक एकाउंट न्यायालय के केश, पोस्ट ऑफिस का पता, गाड़ी नम्बर, फोन नम्बर आदि सारा लेखा–जोखा रहेगा। मतदाता सूची का नम्बर भी वही रहेगा। परिवार का प्रमुख एक होगा किन्तु यदि परिवार के कुछ सदस्य दूसरे गांव में रहते है तो प्रत्येक गांव में एक उप प्रमुख रहेगा। वह उप परिवार उस गांव में पंजीकृत होगा किन्तु सम्पत्ति सबकी संयुक्त रहेगी। कोड नम्बर इस प्रकार होगा कि पहले दो नम्बर लोक प्रदेश दूसरे दो नम्बर लोक जिला, तीसरे दो नम्बर ग्राम तथा अंतिम तीन अंक परिवार की पहचान करेंगे।

ग्राम सभा

पूरे देश में निंन्यानवे लोक प्रदेश, प्रत्येक लोक प्रदेश में निन्यान्नवे जिले, प्रत्येक जिले में निन्यान्नवे गांव तथा एक ग्राम में इतने परिवार होंगे कि किसी गांव की कुल आबादी औसत तेरह सौ के आस पास इस आधार पर बटी हो कि किसी जिले में गांवो की संख्या निन्यान्नवे से कम ज्यादा न हो। ग्राम सभा को वे सभी अधिकार होंगे जो उस गांव के परिवार मिल कर सौपेंगे। ग्राम सभा अपनी कार्य प्रणाली स्वंय तय करेगी। ग्राम सभा का अपने आंतरिक मामलो में निर्णय अंतिम होगा किन्तु यदि किसी परिवार या व्यक्ति को ऐसा लगे कि ग्राम सभा ने उसके प्राकृतिक या परिवारिक अधिकारों की सीमाओं का अतिक्रमण किया है तो परिवार ऊपर की किसी इकाई में नियमानुसार अपील कर सकता है।

यदि कोई नया परिवार गांव में स्थायी रूप से रहना चाहता है तथा पंजीकरण कराकर ग्राम सभा का सदस्य बनना चाहता है तो उसे ग्राम सभा की अनापत्ति आवश्यक होगी किन्तु कोई भी परिवार किन्ही दो ग्राम सभाओं का सदस्य एक साथ नहीं रह सकता। यदि अलग–अलग उप परिवार है तो रह सकते हैं। यदि कोई ग्राम सभा किसी परिवार को गांव से निकालना चाहती है तो उसके निष्कासन की प्रक्रिया जटिल होगी जो केन्द्र सभा की सहमति से ही बनाई जायेगी। किन्तु प्रत्येक ग्राम सभा को यह अधिकार होगा कि वह किसी भी परिवार या व्यक्ति को बिना कारण बताये बहिष्कृत कर सकती है। ऐसा परिवार आदेश के विरुद्ध ऊपर की इकाई से विचार हेतु निवेदन कर सकता है। ऐसे परिवार या व्यक्ति के मौलिक या संवैधानिक अधिकार सुरक्षित रहेंगे। सिर्फ सामाजिक अधिकारों तक ही कार्यवाही हो सकती है। ग्राम सभाएं अपने अधिकार, जिला सभा को जिला सभा, लोक प्रदेश सभा को तथा लोक प्रदेश सभा केन्द्र सभा को दें सकेगी। तथा आवश्यकतानुसार बने नियमों के अनुसार ले भी सकेगी। जिला सभा, लोक प्रदेश सभा तथा केन्द्र सभा भी अपनी–अपनी कार्य प्रणाली के नियम स्वयं बनायेगे। यदि किसी सभा के नियम किसी अन्य सभा की स्वतंत्रता में बाधक होंगे तो ऊपर वाली सभा उनकी सीमाओं का निर्धारण करेगी।

केन्द्रीय सरकार या तंत्र

उपरोक्त सभाओं के अतिरिक्त एक केन्द्र सरकार होगी। इस सरकार की व्यवस्था के अंतर्गत पांच विभाग होंगे – 1. सेना 2. पुलिस 3. वित्त 4. विदेश 5. न्याय। केन्द्र सरकार का गठन संविधान के अनुसार होगा। वर्तमान संसदीय प्रणाली में कुछ छोटे मोटे संशोधन करके इस व्यवस्था को जारी रखा जा सकता है। वर्तमान में सक्रिय राज्य सभा का स्थान केन्द्रीय सभा ले सकती हैं। संसद से दल बदल विधेयक समाप्त हो सकता है। संसद सदस्य का चुनाव दल गत राजनीति मुक्त निर्दलीय भी हो सकता है। मतदान में परिवार के मुखिया द्वारा मत देकर परिवार की संख्या के आधार पर मत गिनने की प्रणाली भी बन सकती हैं। ऐसे अनेक विषयों पर भविष्य में विचार मंथन करके निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। किन्तु किसी भी स्थिति में केन्द्र सरकार तथा केन्द्र सभा के अधिकारों का एकत्रीकरण नहीं हो सकता। दूसरी बात यह भी कि कोई भी ऊपर वाली इकाई नीचे वाली इकाइयों के बीच के विवादों का निपटारा तो कर सकती है किन्तु उनकी सहमति के बिना उनके अधिकार स्वंय नहीं ले सकती। सुरक्षा और न्याय केन्द्र सरकार का दायित्व होता है तथा जनहित के अन्य कार्य उसके स्वैच्छिक कर्तव्य। राज्य सुरक्षा और न्याय के अतिरिक्त अन्य कार्य खाली रहने पर कर सकता है किन्तु सुरक्षा और न्याय की अनदेखी करके नहीं ।

अपराध

व्यक्ति के तीन प्रकार के अधिकार होते हैं– 1. प्राकृतिक या मौलिक 2. संवैधानिक 3. सामाजिक। किसी व्यक्ति के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन अपराध होता है, संवैधानिक अधिकारों का उल्लंघन गैर कानूनी तथा सामाजिक अधिकारों का उल्लंघन अनैतिक होता है। अपराध गैर कानूनी तथा अनैतिक कार्य बिल्कुल अलग–अलग होते हैं। सिर्फ पांच प्रकार के कार्य अपराध होते हैं। 1. चोरी, डकैती, लूट 2. बलात्कार 3. मिलावट तथा कम तौलना 4. जालसाजी धोखाधड़ी 5. बल प्रयोग, हिंसा, आतंकवाद। अन्य कोई काम अपराध नहीं होता। अपराध की रोकथाम के उद्देश्य से उठाये गये कदम गैर कानूनी कार्य होते हैं, अपराध नहीं। बिना लाइसेंस के बंदूक, पिस्तौल, बम रखना गैर कानूनी होता है, अपराध नहीं। गांजा, अफीम, एल.एस.डी. ब्लैक तस्करी, भ्रष्टाचार, टैक्स, चोरी, आदिवासी, हरिजन एक्ट उल्लंघन आदि कार्यों में से कुछ कार्य अनैतिक हो सकते हैं, तथा कुछ गैर कानूनी। किन्तु ऐसा कोई भी कार्य अपराध नहीं होता। सम्पूर्ण भारत में कुल आबादी में से औसत दो प्रतिशत ही अपराधी होते हैं। शेष अंठानवे प्रतिशत में से या तो गैर कानूनी कार्य करने वाले मिलेंगे या अनैतिक वाले। इनमें भी बिहार, यू.पी. में अपराधियों का प्रतिशत अभी तीन हो सकता है तो दक्षिण या पहाड़ो पर एक के करीब। भारत की सम्पूर्ण आबादी में से वर्तमान में ऐसा व्यक्ति खोज निकालना संभव नहीं जो किसी न किसी गैर कानूनी कार्य से सलंग्न न हो।

अपराधों की रोकथाम के उद्देश्य से अपराधी के मौलिक अधिकारों में कटौती की जाती हैं। नई व्यवस्था में निम्नलिखित सतर्कता रखी जायेगी।

1. ऐसे सभी कानून हटा लिये जायेंगे जो व्यक्ति के व्यक्तिगत, परिवार के पारिवारिक, गांव के स्थानीय, जिला प्रदेश और केन्द्र के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करते हों। जुआ, शराब, तम्बाकू, आत्महत्या, दहेज, विवाह, धर्म, जाति, महिला उत्पीड़न, भ्रूण हत्या, छुआछूत आदिवासी, हरिजन जैसे कानून पूरी तरह समाप्त कर दिये जायेंगे। केन्द्र सरकार इनमें कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकेगी। मिलावट और मिश्रण को भी अलग–अलग परिभाषित किया जायेगा।

2. पांच प्रकार के अपराधों पर नियंत्रण के लिये दंड की मात्रा तथा तरीके का निर्धारण इस प्रकार होगा कि उससे समाज में भय हो, अपराधियों को दंड मिले तथा पीड़ितों को न्याय दिखे। यदि आवश्यक हुआ तो खुली फांसी तक का प्रावधान किया जा सकता है या इससे भी अधिक अमानवीय दंड हो सकता हैं।

3. अपराध पीड़ित को आकर्षक मुआवजा दिया जायेगा।

4. फांसी के विकल्प के रूप में एक नया प्रयोग किया जायेगा। फांसी की सजा घोषित अपराधी दोनों आंख निकालकर अन्धा रूप में जीवित रहना चाहे, तो न्यायालय उसे उचित शर्तो तथा जमानत पर तब तक जीवित रहने की पैरोल दे सकता हैं जब तक अपराधी जमानतदार तथा न्यायालय सहमत हो।

5. अपराधों के वर्तमान ग्राफ को देखते हुए नई राजनैतिक व्यवस्था आदेश देगी कि सम्पूर्ण भारत में तीन माह के लिये एक आपातकालीन दंड व्यवस्था लागू होगी। इसके अनुसार पांच प्रकार के अपराधों में लिप्त या संदिग्ध व्यक्तियों पर गुप्तचर पुलिस जांच करके गुप्तचर न्यायालय में मुकदमा प्रस्तुत करेगी। गुप्तचर न्यायालय, गुप्त जांच के आधार पर दंड दे सकते हैं। दंड घोषित अपराधी उच्च तथा उच्चतम न्यायालय में अपील कर सकता हैं, जिनके गुप्तचर न्यायालय दंड की गुप्त समीक्षा करके निर्णय देंगे। सारी प्रक्रिया तीन माह में सम्पन्न हो जायेगी। गुप्तचर न्यायालयों का संचालन तथा नियुक्ति सर्वोच्च न्यायालय करेगा जिसमें कार्यपालिका अथवा विधायिका की कोई भूमिका नहीं होगी। तीन माह में लगभग पचास अपराधियों को मृत्युदंड एक सौ को आजीवन कारावास तथा पांच सौ को उचित दंड का लक्ष्य निर्धारित होगा। तीन माह के बाद व्यवस्था होगी कि जिन जिलों के जिलाधीश, जिला न्यायाधीश तथा एस.पी. सर्व सम्मति से अपने जिले में गुप्तचर मुकदमा लागू करना चाहे तो अल्प काल के लिये कर सकते हैं। यदि ऐसी व्यवस्था तीन माह से अधिक बढ़ानी हो तो जिला सभा की स्वीकृति भी आवश्यक होगी।

समानता

भारत के प्रत्येक नागरिक के अधिकार समान होंगे। किसी भी व्यक्ति अथवा समूह को विशेष अधिकार नहीं होंगे। किसी विशेष स्थिति मे विशेष सुविधा दी जा सकती है किन्तु अधिकार नहीं। किन्तु ऐसी सुविधा प्राप्त करने वाले का अधिकार नहीं होगा बल्कि दाता का स्वैच्छिक कर्तव्य होगा। प्रत्येक व्यक्ति के मौलिक तथा संवैधानिक अधिकार बिल्कुल एक समान होंगे किन्तु सामाजिक अधिकार अलग–अलग हो सकते है। सभी प्रकार के आरक्षण पूरी तरह समाप्त हो जायेंगे।

न्यायपालिका

व्यक्ति तथा नागरिक की भूमिकाएँ अलग–अलग होती है, भले ही दोनों का संचालक एक ही होता हैं। व्यक्ति समाज का अंग होता है तो नागरिक राष्ट्र का। व्यक्ति के रूप में उसे मौलिक तथा सामाजिक अधिकार प्राप्त होते है तो नागरिक के रूप में संवैधानिक। किसी व्यक्ति के संवैधानिक अधिकार छीन लेने के बाद भी उसके मौलिक तथा सामाजिक अधिकार रह सकते हैं।

प्रत्येक व्यक्ति के मौलिक अधिकारों की सुरक्षा तथा उच्चश्रृंखलता पर नियंत्रण तंत्र का दायित्व होता है तथा समाज का कर्तव्य। समाज उच्चश्रृंखलता को सिर्फ अनुशासित ही कर सकता है, नियंत्रित नहीं। क्योंकि समाज को दंडित करने का अधिकार नहीं है। लोक तंत्र में तंत्र तीन इकाइयों के तालमेल से अपना काम करता हैं– 1. विधायक 2. न्यायपालिका 3. कार्यपालिका। प्रत्येक व्यक्ति के मौलिक अधिकारों की सुरक्षा ही उसके प्रति न्याय है तथा उच्चश्रृंखलता पर नियंत्रण ही उसकी व्यवस्था। विधायिका न्याय को परिभाषित करती है, न्यायपालिका उक्त परिभाषा के अनुसार न्याय और दण्ड की मात्रा तय करती है तथा कार्यपालिका न्यायालय के निर्णय अनुसार कार्यान्वयन करती है। व्यक्ति के मौलिक अधिकारों की संपूर्ण सुरक्षा न्यायालय का महत्वपूर्ण दायित्व हैं। यदि ऐसी असुरक्षा किसी व्यक्ति से हो तो न्यायालय तंत्र की अन्य इकाइयों के साथ मिलकर सुरक्षा देता है। और यदि असुरक्षा तंत्र के ही किसी भाग से हो तो न्यायालय संविधान के अनुसार उसकी सुरक्षा करता है और यदि संविधान भी ऐसे मौलिक अधिकारों के विरूद्ध कुछ करे तो न्यायालय ऐसे संविधान संशोधन को भी अमान्य कर सकता है।

व्यक्ति के मौलिक अधिकारो की सुरक्षा की व्यवस्था के साथ–साथ न्यायपालिका व्यक्ति के संवैधानिक अधिकारों की सुरक्षा में भी सक्रिय रहती हैं। यद्यपि मौलिक अधिकारों की सुरक्षा न्यायालय का दायित्व है तो संवैधानिक अधिकारों की सुरक्षा उसका स्वैच्छिक कर्तव्य।

नई व्यवस्था में निम्न संशोधन प्रस्तावित है–

1. पश्चिम की न्याय की अवधारणा है कि चाहे सौ अपराधी छूट जाये किन्तु एक भी निरपराध दडिंत न हो। इसे बदलकर इस तरह किया जायेगा कि न कोई निरपराध दंडित हो, न कोई अपराधी छूट सके।

2. प्रशिक्षण कैंप लगाकर न्यायाधीशों को प्रशिक्षित किया जायेगा कि (क) वे अपराध गैर कानूनी तथा अनैतिक का अंतर समझे।

(ख) वे पुलिस द्वारा सिद्ध अपराधी को न्यायिक प्रक्रिया चलते तक संदिग्ध माने, निर्दोष नहीं।

(ग) वे पुलिस को न्याय सहायक समझे, पक्षकार नहीं।

(घ) वे अपनी सीमाएं समझें जिसके अनुसार वे किसी व्यक्ति को सीधा न्याय नहीं दे सकते, बल्कि कानून के अनुसार ही फैसला करने तक सीमित हैं। यदि कोई कानून गलत है तो वे कानून को रद्द कर सकते है और संविधान की धाराएं भी रद्द कर सकते है किन्तु निर्णय करते समय जो कानून हैं, न्यायालय उसके विरूद्ध नहीं जा सकते।

(च) न्यायपालिका किसी कानून या संवैधानिक प्रावधान को रद्द कर सकती है किन्तु कोई कानून बना नहीं सकती।

(छ) न्यायपालिका न तो जनहित को परिभाषित कर सकेगी न ही जनहित याचिकाएं सुन सकती हैं।

3. न्यायपालिका किसी भी सामाजिक मामले में कभी कोई दखल नहीं दे सकती। वर्तमान में न्यायालय में लम्बित ऐसे करोड़ों मुकदमे तुरंत समाप्त हों जायेंगे।

4. न्यायपालिका पांच प्रकार के अपराधों से जुड़े मामले प्राथमिकता के स्तर पर देखेगी।

5. अधिकांश न्यायिक प्रकरण तो परिवार, गांव स्तर तक ही निपट जायेंगे, कुछ ही मामले न्यायालय तक जायेंगे।

6. किसी भी आपराधिक मामले का अंतिम निर्णय जिला जज ही करेंगे। कोई अपील होने पर उच्च न्यायालय उक्त लोक प्रदेश के या विशेष स्थिति में किसी भी अन्य जिला जज या जिला जजों की टीम को पुनःपरीक्षण या पुनः विचार हेतु भेज सकता है किन्तु निर्णय उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय नहीं दे सकता। उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय अन्य कानूनी या संवैधानिक मामलों तक सीमित रहेंगे।

7. पांच प्रकार के अपराधों में संलिप्त मुकदमों में दोष सिद्धि का भार अभियुक्त पर होगा। सबसे पहले अभियुक्त के बयान होंगे तथा पुलिस या न्यायालय उससे जिरह कर सकेगा।

8 न्यायालय में सच बोलने वाले और झूठ बोलने वाले अभियुक्त के दंड में युक्ति संगत इतना फर्क किया जायेगा कि न्यायालय में सच बोलने की प्रवृत्ति प्रोत्साहित हो।

9 किसी भी मामले में कानून अधिकतम दंड निर्धारित कर सकता है किन्तु न्यूनतम दंड नहीं। न्युनतम दण्ड की मात्रा न्यायालय पर निर्भर होंगी।

10 किसी मामले में अनावश्यक अपील करने वालो से भारी अर्थदंड लिया जायेगा।

संविधान

व्यक्ति एक प्राथमिक तथा मूल इकाई है तथा समाज अप्रत्यक्ष किन्तु अंतिम इकाई। व्यक्ति के मौलिक अधिकार होते है। जिनकी सुरक्षा का दायित्व तंत्र का होता है। समाज तथा तंत्र के बीच संविधान होता है। इस तरह व्यक्ति नियंत्रित होता है तंत्र से, तंत्र संविधान से तथा संविधान समाज से । तंत्र के अधिकतम तथा समाज के

न्यूनतम अधिकारों की सीमा रेखा निश्चित करने वाले दस्तावेज को संविधान कहते हैं। दूसरी ओर तंत्र के न्यूनतम तथा व्यक्ति के अधिकतम अधिकारों की सीमा रेखा निश्चित करने वाला दस्तावेज कानून होता है। व्यक्ति एक लक्ष्मण रेखा से घिरा होता है। इस रेखा के भीतर व्यक्ति के मौलिक अधिकार होते हैं। कोई भी अन्य चाहे वह तंत्र का भाग हो या समाज का, उसकी अनुमति के बिना इस रेखा को पार नहीं कर सकता। यह रेखा वह स्वयं बनाता है जो वहां तक जा सकती है जहां किसी अन्य की सीमा रेखा को न छुए। यदि ऐसी रेखाएं एक दूसरे की स्वतंत्रता में बाधक होती है तब तंत्र की भूमिका शुरू हो जाती है। जब तंत्र के कानून किसी व्यक्ति या व्यवस्था की किसी सीमा रेखा में बाधक हो तब संविधान की भूमिका शुरू हो जाती है। इसी तरह जब संविधान की सीमा रेखा लक्ष्मण रेखा का उल्लंघन करने लगती है तब समाज की भूमिका शुरु हो जाती है।

संविधान बनाने वालो को ऐसे स्पष्ट विभाजन तथा सीमा रेखाओं का ज्ञान न होने से अनेक विसंगतियां उत्पन्न हुईं। संविधान निर्माण में लगे निर्णायक चेहरे का न तो कोई अपना मौलिक सोच था न भारतीय संस्कृति का ज्ञान या विश्वास। इसलिये उन्होंने पश्चिम की नकल तक स्वयं को सीमित रखा। वे यह भूल गये कि संविधान तंत्र पर लोक के अनुशासन का आधार स्तंभ है। उन्होने संसद को तंत्र का महत्वपूर्ण भाग भी बना दिया तथा उसे ही लोक का भी प्रतिनिधि मान लिया। संविधान स्वयं में दस्तावेज मात्र होता है जो अपने बनाने वाले तथा संशोधन का अधिकार रखने वाले का प्रतिनिधित्व करता है। अर्थात जीवन्त इकाई संविधान नहीं होती बल्कि जो इकाई उसे नियंत्रित तथा संचालित करती है वह जीवन्त इकाई होती है। सिद्धान्त रूप से पूरा का पूरा तंत्र संविधान के अंतर्गत बनता है तथा किसी भी स्थिति में संविधान का उल्लंघन नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में तंत्र के ही किसी भाग को संविधान संशोधन या समीक्षा का अंतिम अधिकार नहीं हो सकता।

इस संबंध में आदर्श व्यवस्था तो यह होती है कि समाज द्वारा संविधान संशोधन के लिये एक भिन्न इकाई का गठन होता जो तंत्र द्वारा या किसी भी अन्य इकाई के प्रस्ताव पर संविधान संशोधन करती किन्तु हम वर्तमान में ज्यादा छेड़छाड़ नहीं करना चाहते इसलिये प्रस्ताव है कि या तो संसद द्वारा संविधान संशोधन के किसी प्रस्ताव पर अंतिम निर्णय जनमत संग्रह से हो अथवा लोक संसद सरीखी एक भिन्न इकाई हो जो तंत्र से किसी भी रूप से जुड़ी न हो किन्तु संविधान संशोधन मामले में संसद के साथ–साथ बराबरी की भागीदारी हो अर्थात संसद तंत्र का प्रतिनिधित्व करे तथा लोक संसद लोक का। किसी एक को संविधान संशोधन के अंतिम अधिकार न हों ।

संविधान के मूल ढांचे में कुछ और परिवर्तन के प्रस्ताव है

1. समानता का व्यवहार करना हमारा सामाजिक कर्तव्य होगा, संवैधानिक बाध्यता नहीं।

2. कर्तव्य तथा दायित्व को पृथक–पृथक परिभाषित किया जायेगा।

3. भारत एक सौ तीस करोड़ व्यक्तियों का देश तथा परिवारों का संघ होगा। धर्म, जाति, भाषा, लिंग गरीब–अमीर, आधारित कोई भेदभाव नहीं होगा।

4. प्रत्येक इकाई को स्वतंत्र प्रतिस्पर्धा की असीम छूट होगी। तब तक जब तक वह किसी अन्य की वैसी ही सीमा तक न पहुंच जावे। तंत्र न किसी पक्ष की प्रतिस्पर्धा में कोई बाधा पैदा करेगा न ही किसी पक्ष को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सहायता करेगा। कोई अमीरी रेखा नहीं होगी।

5. विधायिका तथा कार्यपालिका को और अलग–अलग किया जायेगा। वर्तमान में विधायिका का कार्यपालिका में बहुत अधिक हस्तक्षेप है।

6. सांसद वैधानिक स्तर पर सिर्फ जनप्रतिनिधि होगा, दल प्रतिनिधि नहीं। संसद में पूरी तरह वाकस्वातंत्र होगा। कोई व्हिप जारी नहीं हो सकता ।

7. किसी व्यक्ति के आपराधिक या असंवैधानिक आचरण के अतिरिक्त किसी आचरण की आलोचना मूल अधिकार हनन माना जायेगा। आप ऐसे असामाजिक कार्य की सूचना उपयुक्त स्थान पर दे सकते हैं।

8. सेना और पुलिस को छोड़कर कोई अन्य किसी भी रूप में घातक हथियार नहीं रख सकेगा।

आर्थिक

भारत में श्रम बुद्धि तथा धन के बीच लगातार दूरी बढ़ रही है। स्वतंत्रता के बाद अब तक तैतीस प्रतिशत निचली आबादी का जीवन स्तर लगभग दो गुना, तैतीस प्रतिशत मध्यम श्रेणी का औसत आठ गुना तथा तैतीस प्रतिशत उच्च स्तर का चौसठ गुना बढ़ा है। निचली आबादी में अधिकांश श्रमजीवी, मध्यम श्रेणी में बुद्धिजीवी, तथा उच्च श्रेणी में पूंजीपति आते हैं। कृषि व्यवसाय उद्योग का लगातार केन्द्रीयकरण हो रहा है। गांवो की आबादी का शहरों की ओर पलायन जारी है। वायु या जल प्रदूषण बढ़ रहा है। स्वास्थ में प्राकृतिक भूमिका घट रही है तथा कृत्रिम बढ़ रही है। मंहगाई लगातार घटने से उत्पादक परेशान है और उपभोक्ता ठीक। खुली प्रतिस्पर्धा में कानूनी बाधाओं के कारण भ्रष्टाचार लगातार बढ़ रहा है। तंत्र के नियंत्रण में सेना, पुलिस, न्याय तो थे ही किन्तु अर्थ में भी उसका असीमित हस्तक्षेप होने से शक्ति संतुलन राजनीति के पक्ष में झुक रहा है। अच्छे–अच्छे गुरू, उद्योग पति या सम्मानित विचारक तक नेता बनने को अधिक महत्व दे रहे है। यदि किसी से पूछा जाये कि गांधी नेहरू और बिडला में क्या बनना पसंद करेंगे तो नेहरू अर्थात प्रधानमंत्री बनना ही पसंद करेगा। आर्थिक मामलों में राज्य का सम्पूर्ण नियंत्रण है। तंत्र किसी भी सीमा तक टैक्स लगा सकता है तथा मनमाना बेरोक टोक खर्च भी कर सकता है। तंत्र जितना चाहे उतना विदेशों से कर्ज भी ले सकता है। तंत्र जितना चाहे उतना अपने लोगों के वेतन तथा सुविधाएं दे सकता है।

इस संबंध में मेरा यह प्रस्ताव है

1. केन्द्र सरकार अपनी केन्द्र केन्द्र सरकार की सम्पत्ति को छोड़कर अन्य सम्पूर्ण सम्पत्ति पर अधिकतम दो प्रतिशत वार्षिक सम्पत्ति कर लगा सकेगी। इसमे व्यक्तिगत, पारिवारिक, धार्मिक, किसी सभा की, स्कूल अस्पताल, सड़क शमशान तक शामिल हैं।
2. केन्द्र सरकार कृत्रिम उर्जा डीजल, बिजली, केरोसिन, कोयला, गैस आदि का मूल्य इस सीमा तक बढ़ा सकेगी कि पूरे भारत से सरकार को साढ़े बत्तीस लाख करोड़ रुपया मिल सके। वर्तमान समय में करीब ढाई गुना मूल्य कर देने से यह राशि मिल जायेगी। यह पूरी राशि पच्चीस हजार रुपया प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष के आधार पर बांट दी जायेगी। यह राशि परिवार स्वयं खर्च कर सकता है, या ग्राम सभा को दी जा सकती है। यदि सरकार उचित समझे तो वह पूरी आबादी को पच्चीस हजार न देकर आधी गरीब आबादी को पचास हजार वार्षिक भी दे सकती है। अथवा यदि आधी आबादी को पच्चीस हजार ही देना हो तो कृत्रिम ऊर्जा का मूल्य कम बढ़ा सकती है।
3. अन्य सभी प्रकार के टैक्स, इन्कम टैक्स, सहित तथा सभी प्रकार की सबसीडी विकलांग सहित समाप्त हो जायेगी।

4. विदेशी कर्ज इस प्रकार वापस होगा कि दस वर्ष में शून्य हो जाये।

5. शिक्षा, स्वास्थ आदि पर सरकार कोई बजट खर्च नहीं करेगी।

6. सभी प्रकार के अंतरिक्ष अनुसंधान विदेश मंत्रालय देखेगा। अन्य अनुसंधानकर्ता की व्यवस्था सभाएँ करेंगी।

7. सभी सभाएँ अपने खर्च की व्यवस्था स्वयं करेगी।

8. पॉच विभागों के काम छोड़कर अन्य सभी मामलों में या तो समाजीकरण होगा या निजीकरण किन्तु सरकारी करण नहीं होगा। स्कूल, कालेज, अस्पताल, रेल, डाक आदि भी या तो सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत होंगी या निजी व्यावसायिक किन्तु सरकारी नहीं होगी।

9. विदेश मंत्रालय तथा न्यायपालिका सामान्यतया अपने खर्च की व्यवस्था स्वंय करेंगे।

आर्थिक समस्याओं के संदर्भ में मेरा मानना है कि भारत में आर्थिक असमानता, श्रम बुद्धि मूल्य असमानता, मुद्रा स्फीति ,शहर–गॉव, आबादी असंतुलन, पर्यावरण प्रदूषण, बेरोजगारी, विदेशी मुद्रा का संकट जैसी अनेक गंभीर समस्याओं का एकमात्र समाधान है कृत्रिम ऊर्जा मूल्य में भारी वृद्धि। मैं यह भी जानता हूँ कि मिडिल क्लास तथा उच्चवर्ग ऐसा कभी नहीं होने देगा। इसलिये मैंने इससे प्राप्त सारा पैसा सबके बीच या आधी आबादी के बीच बंटने का प्रस्ताव रखा है।

सामाजिक, धार्मिक

धर्म, समाज तथा राज्य अर्थात तंत्र, बिल्कुल अलग–अलग होते हैं। तीनों का लक्ष्य तो एक ही होता है ''प्रत्येक व्यक्ति के प्राकृतिक या मौलिक अधिकारों की सुरक्षा'' किन्तु तीनों की कार्यप्रणाली बिल्कुल अलग–अलग होती है। धर्म व्यक्ति को अच्छे कार्यो के लिये प्रेरित करता है, समाज व्यक्ति को अनुशासित करता है तथा राज्य शासित। तीनों की अपनी–अपनी सीमाएँ होती हैं। धर्म व्यक्तिगत आचरण तक सीमित होता है, समाज संगठनात्मक स्वरुप का तथा राज्य शक्ति सम्पन्न। धर्म न किसी को अनुशासित कर सकता है न ही दण्डित, समाज व्यक्ति या परिवार को बहिष्कृत कर सकता है किन्तु दण्डित नहीं और राज्य दण्डित कर सकता है। धर्म सिर्फ हृदय परिवर्तन कर सकता है। समाज व्यक्ति के सामाजिक अधिकार वापस ले सकता है और राज्य किसी को संवैधानिक मौलिक तथा सामाजिक अधिकारों से भी वंचित कर सकता है।

धर्म कभी संगठन का स्वरुप नहीं ले सकता, संस्था का स्वरुप ले सकता है। धर्म व्यक्ति के व्यक्तिगत आचरण से पहचाना जाता है, पूजा पद्धति से नहीं। धर्म और सम्प्रदाय बिल्कुल भिन्न–भिन्न होते है। यदि कोई धर्म संगठन स्वरुप में है तो वह सम्प्रदाय ही होगा, धर्म नहीं। धर्म मात्र जीवन पद्धति में ही होता है। दुनियां में हिन्दू जीवन पद्धति अकेली है जिसे निश्चित रुप से धर्म कहा जा सकता है किन्तु इस्लाम सिख तथा साम्यवाद निश्चित रुप से सम्प्रदाय है धर्म नहीं। अन्य धर्मो को गुण–दोष के आधार पर मिश्रित ऑकलन करना होगा। धर्म किसी भी रुप में बल प्रयोग की अनुमति नहीं देता। समाज तथा राज्य अपनी व्यक्तिगत सुरक्षा के लिये सीमित बल प्रयोग की अनुमति देता है। यदि हम हिन्दुओं के धर्म या सम्प्रदाय का ऑकलन करें तो हिन्दुत्व तो निश्चित रुप से पूरी तरह धर्म है किन्तु अनेक हिन्दू अन्य सम्प्रदायों से मुकाबला की रणनीति के अन्तर्गत संगठन बनाकर हिसंक मुकाबला करने के मार्ग पर बढ़ रहे हैं। ऐसे व्यक्ति या संगठन सम्प्रदाय ही कहे जा सकते है, धर्म नहीं, भले ही वे अपने को हिन्दू ही क्यों न कहते हों।

नई व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति को संगठन बनाने की छूट होगी किन्तु ऐसे संगठन स्वयं को सम्प्रदाय ही कह सकते है, धर्म नहीं। किसी भी संगठन को, चाहे वह व्यावसायिक हो या धार्मिक या कोई अन्य, उसे संवैधानिक सामाजिक स्तर पर छूट तो होगी किन्तु मान्यता नहीं। ऐसे संगठनों को हर स्तर पर निरुत्साहित किया जायेगा। दूसरी ओर किसी भी प्रकार की संस्था को सामाजिक मान्यता प्राप्त होगी तथा उसे प्रोत्साहित भी किया जायेगा।

परिवार से लेकर केन्द्र सभा तक सामाजिक व्यवस्था के भाग है। इन्हें संवैधानिक मान्यता प्राप्त है किन्तु सामाजिक या राजनैतिक व्यवस्था एक दूसरे के कार्यो में हस्तक्षेप नहीं कर सकते। यदि इन दोनों के बीच कोई टकराव होगा तो संविधान सर्वोच्च है तथा वही निपटारा करेगा। यदि कठिनाई होगी तो दोनों के प्रतिनिधि वर्तमान संसद और लोकसंसद के रुप में बैठकर संविधान संशोधन कर सकते हैं किन्तु यदि तंत्र और लोक संसद के बीच फिर भी टकराव होता है तो जनमत संग्रह ही इसका अंतिम समाधान होगा।

धर्म और संस्कृति अलग–अलग विषय होते हैं, यद्यपि दोनों में बहुत कुछ पूरकता भी है। धर्म व्यक्तिगत आचरण तक सीमित होता है तो संस्कृति सामूहिक आचरण तक। धर्म में विचार अधिक होता है, भावना कम, किन्तु संस्कृति भावनात्मक ही अधिक होती है। भारत में धर्म की परिभाषा बदली तो संस्कृति भी अपने आप बदल गई। कोई व्यक्ति बिना विचारे बार–बार किसी कार्य को करने लगे तो यह उसकी आदत बन जाती है। ऐसी आदत लम्बे समय तक बनी रहे तो वह उसका संस्कार बन जाती है। ऐसा संस्कार किसी इकाई के आम

लोगों का बन जावे तो वह उस इकाई की संस्कृति बन जाती है। वर्तमान समय में भारतीय संस्कृति की दो मुख्य पहचान मानी जा सकती है। 1. मजबूत से दबना और कमजोर को दबाना 2. न्यूनतम प्रयत्न अधिकतम लाभ की अपेक्षा। यद्यपि ये दोनों संस्कार हमारी भारतीय संस्कृति के बिल्कुल विपरीत हैं किन्तु स्वतंत्रता के बाद भारत ने जिस तरह साम्यवाद, पश्चिम तथा इस्लामिक संस्कृति की बेमेल खिचड़ी बनाई उसके स्वाभाविक परिणाम के रुप में ऐसा हुआ।

नई व्यवस्था में तंत्र की भूमिका सीमित होकर सामाजिक व्यवस्था मजबूत होगी तब इस संस्कृति में धीरे–धीरे बदलाव आयेगा।

शिक्षा

भारत में शिक्षा का तेजी से विस्तार हुआ किन्तु ज्ञान तेजी से घटता गया। शिक्षा विस्तार ने भौतिक प्रगति में मदद की किन्तु नैतिक पतन रोकने में कोई सहायता नहीं की। ज्ञान तीन जगह से मिलता है 1. जन्म पूर्व के संस्कार 2. पारिवारिक वातावरण 3. सामाजिक परिवेश। शिक्षा दूसरों के द्वारा दी जाती है किन्तु ज्ञान स्वयं का अनुभव होता है। पारिवारिक सामाजिक व्यवस्था को छिन्न–भिन्न करके तंत्र ने जिस तरह सब कुछ अपने हाथ में ले लिया उसका दुष्परिणाम ज्ञान की गिरावट के रुप में देखा जा सकता है।

नई व्यवस्था में शिक्षा पूरी तरह तंत्र के हस्तक्षेप से मुक्त होगी। तंत्र न शिक्षा पर कोई खर्च करेगा न ही कोई हस्तक्षेप करेगा। शिक्षण संस्थाएँ दो प्रकार की होंगी–1. प्राथमिक 2. उच्च। उच्च शिक्षण संस्थान केन्द्र सभा द्वारा बनाये नियमों से संचालित होंगे। प्राथमिक विद्यालय की व्यवस्था स्थानीय इकाईयॉ करेंगी। उच्च विद्यालय भी तीन प्रकार के होंगे जिसमें अलग–अलग गुण और स्वभाव के ऑकलन के बाद उसी प्रकार की शिक्षा दी जायेंगी। 1. ब्राम्हण गुण स्वभाव प्रधान 2. क्षत्रिय गुण स्वभाव प्रधान 3 वैश्य गुण स्वभाव प्रधान। उच्च विद्यालय में प्रवेश के पूर्व प्रत्येक बालक–बालिका की टेस्ट परीक्षा होगी, जिसमें बालक के ज्ञान और त्याग अर्थात् ब्राहमण वृत्ति की क्षमता का टेस्ट होगा। उत्तीर्ण बालक उच्च विद्यालय में प्रवेश कर सकेंगे। दो वर्ष बाद शेष बालकों का दूसरा टेस्ट होगा जो क्षत्रिय वृत्ति और क्षमता का होगा उत्तीर्ण बालक उस उच्च विद्यालय मे प्रवेश लेंगे। शेष बालक दो वर्ष बाद अर्थात् बारहवें वर्ष में तीसरा टेस्ट कृषि, वाणिज्य, गो पालन अर्थात् वैश्य प्रवृत्ति का देंगे। सभी परीक्षाओं में फेल बालक अथवा अधिक उम्र के लोग या तो आगे नहीं पढ़ सकेंगे अथवा उनके लिये कोई विशेष टेस्ट के नियम बनेंगे। प्राथमिक विद्यालय में बालक–बालिका साथ–साथ पढ़ सकते है किन्तु उच्च विद्यालय दोनों के पृथक–पृथक ही होंगे।

इस शिक्षण व्यवस्था से आत्महत्याएँ भी कम होंगी। आत्महत्याएँ होने का मुख्य कारण यह होता है कि व्यक्ति अपनी क्षमता का ऑकलन किये बिना उपलब्धि की अपेक्षा पालकर बहुत प्रयत्न करता है किन्तु एकाएक उसका सपना टूटता है तो वह आत्महत्या की दिशा में बढ़ जाता है। परिवार या समाज भी बिना क्षमता का ऑकलन किये ऐसा मानता है, जिसके अनुसार उच्च प्रगति के लिये उच्चत्तम उपलब्धि के सपने देखना प्रगति में सहायक होता है। यह सिद्धांत ठीक भी है किन्तु इसमें खतरे भी बहुत है। नई व्यवस्था से व्यक्ति, परिवार और समाज को योग्यता की सीमा का आभाष हो जायेगा। साथ ही ऐसी परीक्षा विवाह चयन में भी सहायक होगी। यदि कोई बालक बारह वर्ष के बाद किसी योग्यता की परीक्षा देना चाहे और उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहे तो उसके लिये परीक्षा की विशेष व्यवस्था होगी।

दूसरी ओर परिवार व्यवस्था समाज व्यवस्था का फिर से मजबूत होना ज्ञान विस्तार में भी सहायक होगा। प्रत्येक बालक को प्रारंभ से ही परिवार और समाज से सीधा सम्पर्क होता रहेगा ।

महिला पुरुष संबंध

महिला पुरुष के संबंधो की तुलना आग और बारुद से होती है। दूरी घटेगी तो खतरा बढ़ेगा और बढ़ेगी तो सृजन रुकेगा। दूसरी ओर दोनों का संबंध एक प्राकृतिक तथा अनिवार्य आवश्यकता है जो एक दूसरे के सम्पर्क से ही पूरी हो सकती है।

इसको व्यवस्थित करना कई परिस्थितियों के तालमेल पर निर्भर करता है– 1. प्राकृतिक बनावट 2. आवश्यकता और पूर्ति के बीच संतुलन 3. संख्या अनुपात बिगड़ना। 4. वर्ग विद्वेष की नीयत से राजनैतिक हस्तक्षेप।

1. महिला और पुरूष के बीच शारीरिक संबंध बनाने की स्थिति मे प्राकृतिक रूप से पुरूष आक्रामक तथा महिला आकर्षक दिखना चाहिये। 2. यदि इच्छाएं सोलह की जगह अब चौदह वर्ष में और विवाह सोलह की जगह इक्कीस की उम्र में होगे तो बलात्कार सहित अनेक अपराध बढ़ेगे। 3. महिलाओं की संख्या घटती गई और पुरानी परिवार व्यवस्था में बदलाव नहीं हुआ जो होना चाहिये था। महिला सशक्तिकरण, कन्या भ्रूण हत्या पर रोक, वैश्यावृत्ति पर रोक, महिला पुरूष की दूरी घटाने तथा बढ़ाने के विपरीत प्रयत्न एक साथ, जैसे वर्ग विद्वेष, वर्ग संघर्ष के राजनैतिक प्रयास घातक परिणाम दे रहे है।

मेरा प्रस्ताव है कि महिला और पुरूष को कानून के अनुसार व्यक्ति ही मानकर समान मानना चाहिये। परिवार की कार्य प्रणाली परिवार मिलकर तय करेगा जिसमे कानून का कोई हस्तक्षेप नहीं होगा। जो परिवार दूरी घटाना चाहेगा वह घटा सकता है और जो बढ़ाना चाहेगा वह बढ़ा सकता है। परिवार का प्रत्येक सदस्य परिवार के अनुशासन से बंधा होगा। परिवार का कोई सदस्य परिवार की सहमति के बिना किसी अन्य संगठन का सदस्य नहीं हो सकेगा। विवाह तलाक दहेज आदि में कानून का कोई हस्तक्षेप नहीं होगा। सहमति के अभाव में बल पूर्वक शारीरिक संबंध बनाना गंभीर अपराध होगा किन्तु सहमति से लोभ लालच से झूठा वादा करके संबंध बनाना कोई अपराध नहीं होगा। अधिक से अधिक वचन भंग का अपराध हो सकता है। यौन शुचिता को अधिक संवेदनशील मुद्दा बनाना अधिक घातक है। इससे बचा जायेगा।

मीडिया तथा अन्य

वर्तमान में मीडिया राजनेताओं के लिये एक हथियार के रूप में उपयोग में आ रहा है। सरकारे मीडिया को खुश करने के लिये अनाप–शनाप खर्च करती है तथा मीडिया यदा–कदा उन्हे ब्लैक मेल भी करता है। मीडिया सूचना माध्यम तक सीमित न रहकर मत निर्माण तक की भूमिका निभा रहा है।

मेरा प्रस्ताव है कि मीडिया पर कोई भी सरकार न कोई खर्च कर सकेगी न ही कोई सुविधा देगी। मीडिया को स्वतंत्र व्यवसाय के रूप में माना जायेगा । सामाजिक संगठन चाहे तो विशेष व्यवहार कर सकते है। सरकार प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार देगी। किसी को किसी भी स्थिति मे कोई आरक्षण नहीं दिया जायेगा। योग्यतानुसार सबको हर मामले में खुली प्रतिस्पर्धा के अवसर उपलब्ध होंगे। एक सीमा से अधिक कमजोरों को सहायता का प्रावधान ऊपर लिखा जा चुका है। इसी तरह सरकार मृत्यु तथा हत्या अथवा घटना और दुर्घटना मे भी अंतर करेगी। हत्या या अपराध पीड़ित को आकर्षक सहायता का प्रावधान होगा जबकि दुर्घटना या मृत्यु के मामले में सरकार की भूमिका शून्य होगी। किसी भी प्रतिनिधि को दया करने का कभी कोई अधिकार नहीं होता। कोई सिर्फ अपनी व्यक्तिगत चीज ही किसी अन्य को दे सकता है, किन्तु किसी की अमानत में से नहीं दे सकता। तंत्र के पास जो कुछ भी होता है वह लोक की अमानत है, उनकी व्यक्तिगत नहीं।

भारत संप्रभुता सम्पन्न देश होते हुए भी विश्व व्यवस्था का पूरक है। भारत मानता है कि विश्व की किसी भी व्यवस्था को किसी भी व्यक्ति के मौलिक अधिकारों के उल्लंघन का अधिकार नहीं हो सकता। यदि दुनियां की कोई इकाई ऐसा करती है तो वह कार्य सम्पूर्ण मानवता के विरूद्ध एक अपराध है और भारत ऐसे किसी अपराध का पूरा–पूरा विरोध करेगा। आज भी अनेक साम्यवादी, इस्लामिक या कुछ तानाशाह देश मौलिक अधिकार को नहीं मानते। ऐसे देशों की सरकारों को भारत अपराधी मानकर ही उनसे व्यवहार करेगा तथा उन सब देशों से इनके विरूद्ध तालमेल करेगा जो लोकतांत्रिक है। भारत अपने को ऐसी मानवतावादी विश्व व्यवस्था के पूरक के रूप में काम करेगा। यदि ऐसा करते समय भारत को कुछ आंशिक क्षति भी होगी तो भारत मानवता के लिये आंशिक नुकसान उठा सकता है।

विदेश के संबंध में मेरा एक अन्य सुझाव है कि हमारे देश की दूसरे देश के साथ सीमा लगती है तो भारत कानून बनायेगा कि विदेश की सीमा से संलग्न अपनी आंतरिक सीमा का पंद्रह कि.मी. का क्षेत्र सतर्कता क्षेत्र के रूप मे घोषित होगा। इस सतर्कता क्षेत्र में निवास करने वाले व्यक्ति को कोई मौलिक अधिकार प्राप्त नहीं होंगे। उन्हे सामाजिक तथा संवैधानिक अधिकार ही रह सकते है।

मै जानता हूँ कि नई व्यवस्था का प्रारूप प्रस्तुत करना हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता के समान जटिल और व्यापक हैं। आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक सहित सब प्रकार की स्वतंत्र व्यवस्थाएं तंत्र की चापलूसी करने लगी है तथा गुलाम सरीखे दिखने लगी हैं। प्राकृतिक अधिकारों की भी परिभाषा बदल दी गई है। सम्पत्ति को मूल अधिकार से हटा दिया गया है तथा कुछ लोग तो बौद्धिक शारीरिक परिश्रम तथा वैध तरीके से कमाई गई सम्पत्ति की भी अधिकतम सीमा की आवाज उठाने लगे हैं। एक ओर तो संसद तक में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के विरूद्ध व्हिप जारी हो रहे है तो दूसरी ओर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर खुली उच्चश्रृंखलता भी बढ़ती जा रही है। हत्या के लिये मुआवजा कम और दुर्घटना मृत्यु के लिये कई गुना अधिक दिया जा रहा है। ऐसे राजनैतिक वातावरण में मैंने कुछ प्रस्ताव रखे है। ये सुझाव मेरे व्यक्तिगत हैं। प्रस्ताव है कोई अंतिम निष्कर्ष नहीं। आप सबसे विचार मंथन के बाद इन प्रस्तावों में अनेक संशोधन हो सकते है किन्तु आवश्यक है कि इसके लिये हमारे आपके बीच निरंतर का सार्थक संवाद हो। इनमें से अनेक समस्याएँ विश्वस्तरीय है तथा अनेक स्थानीय। समाधान भी अलग–अलग स्तर पर प्रभाव डालेंगे किन्तु हमारा प्रारंभिक प्रयास भारत स्तर तक की चर्चा में अधिक है, इसलिए हम संगठन भी अभी भारतीय स्तर तक ही सीमित रख रहे हैं। भविष्य में विश्वस्तर तक जा सकते हैं। व्यवस्थापक एक संगठन के रूप मे चार मुद्दों तक सीमित होकर जनमत जागरण की दिशा मे सक्रिय हैं तो दूसरी ओर ज्ञान यज्ञ परिवार एक संगठन के रूप में नई व्यवस्था के प्रारूप पर विचार मंथन की दिशा में सक्रिय है जो साथी किसी एक संगठन में सक्रिय होना चाहे वे एक में हो सकते है और जो दोनों में सक्रिय होंगे वे एक साथ दोनों में रह सकते है। आप सब पाठकों से अपेक्षा है कि आप इन विषयों पर प्रश्न उठाकर या अपनी टिप्पणी भेजकर विचार मंथन को गति देने में सहायक होंगे।